रविवार, दिनाँक 23-04-2023 को सत्संग में हुए वचनों का संक्षिप्त विवरण

सड़दी दुनियां देख के, हुण आ गये ने बलधार।

प्यारी दासी महाबीर जी नू, दिन रात करे नमस्कार।।

मोंढे हीरे जड़ी गदा सुहांवदी, गल फुलां दे हार।

प्यारी दासी महाबीर जी नू, दिन रात करे नमस्कार।।

रत्न सिंहासन रघुनाथ जी बैठे, चंवर झुलन बेशुमार।

अचरज उन्हां दी लीला ए, अचरज उन्हां दा प्यार।।

उपमा कोई न कर सके, ऋषि मुनि गये हार।

गुप्त रूप बली आंवदे, वैराग ने पाया दिदार।।

तेरी मेरी दुई नू भैणां छोड़ के, आवो महाबीर जी दे द्वार।

ओ तीनों ताप मिटा देसन, भैणां हो जासो निहाल।।

भैणां नू आत्मपद दी चाह है, बली आप मिलावन हार।

त्रिलोकी को रघुनाथ मिलाये दियो, हिवे मेरे भक्त हितकार।।

इक दासी दिन रात रोंवदी, ओदा भय मिटाया बलधार।

ओन्हूं प्रेम है रघुनाथ जी दे मिलने दा, महाबीर जी दित्ता ए दिदार।।

ओ सब दे कष्ट मिटांवदे, दासी चरणां तों जावे बलिहार।

सारियां दासियां हथ जोड़ के, महाबीर जी अग्गू करो नमस्कार।।

सजनों यदि ध्यान से इस भजन के प्रत्येक शब्द को सुना होगा तो आपको अच्छे से समझ आ गया होगा कि सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के द्वारे की नीति और नियम क्या हैं?

इस सन्दर्भ में जो भी उस दाता के द्वारे पर स्थिरता से बने रहना चाहता है उसके लिए बनता है कि वह उन द्वारा प्रदत्त नीति-नियमों की सख़्ती से पालना करते हुए आत्मपद की प्रप्ति करने के योग्य बन जाए। सच्चेपातशाह जी इस भजन द्वारा कलुकाल के कुप्रभाव से संतप्त हर मानव की हालत को दृष्टिगत रखते हुए उसको पुनः आत्म-विश्वास के साथ निष्पाप जीवन जीने के योग्य बनाने हेतु यही आवाहन दे रहे हैं।

इस संदर्भ में हम मानते हैं कि चाहे आपको यह मानव चोला ऐसे समय में प्राप्त हुआ है जब हर मानव (यहाँ तक कि पालना करने वाले भी) कलुषित वातावरण से संतप्त हैं परन्तु फिर भी आपको सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार अपनी बौद्धिक शक्ति का इस प्रकार सद्-निर्माण करना है कि किसी कारण भी आपकी विवेकशक्ति जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में कमज़ोर न पड़े। इस तरह हम स्वयं, अपने आप को मानव-धर्म अनुरूप निर्विकारिता से साधकर, अपने जीवन के कर्त्तव्यों का समयबद्ध निर्वहन करते हुए व जगत से आज़ाद रहते हुए अपने यथार्थ स्वरूप में आजीवन यानि श्वास-प्रश्वास बने रहे।

इसी महत्ता के दृष्टिगत सजनों सच्चेपातशाह जी सबको सचेत करते हुए कहते हैं कि जन्मोपरान्त आपको जो भी परिस्थिति मिली, उससे हताश होकर घबराओ मत अपितु अपने आप को सौभाग्यशाली मानो क्योंकि आपका जन्म उस समय हुआ जब परोपकारी सजन श्री शहनशाह हनुमान जी स्वयंमेव सद्मार्ग प्रदान करने हेतु साक्षात सबके हृदय में प्रकाशमान होकर, उनकी सुरत/ख़्याल को प्रभु चरणों में आजीवन रत रहने की युक्ति बताने के लिए आए। सो उनके इस परोपकार का अपना जीवन सार्थक बनाने हेतु पूरा लाभ उठाओ और उस लाभ प्राप्ति के लिए दिन-रात उन्हें निमष्कार करो। यहाँ निमष्कार करने से तात्पर्य श्वास-प्रश्वास अपना सीस अर्पण करने से है। सीस अर्पण यानि उन्होंने जो नाम-ध्यान व युक्ति बक्षी है, उसको सहर्ष प्रवान करने से है। जानो ऐसा करने से आपके इर्द-गिर्द जो नकारात्मक वातावरण व व्याप्त गन्दगी है, वह आपके मन को प्रभावित नहीं कर पाती और आपकी शारीरिक-मानसिक तन्दुरुस्ती व सुरत की कंचनता बनी रहती है। इस तरह आप राजसिक व तामसिक गुणों में उलझने से बचे रहते हो। स्पष्ट है कि यह सुखद और आनन्द प्रदायक ऐसा रास्ता है जो किसी भी मानव को सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के द्वारे के अतिरिक्त कहीं से भी प्राप्त नहीं हो सकता। अतः अपने आपको सौभाग्यशाली मानो

और अपने सौभाग्य को जगाने के लिए उनके नीति-नियमों की अन्तर व बाहरी व्यवहार के दौरान सख़्ती से पालना करो। कहने का आशय यह है कि सीस अर्पण करते समय, अपने मन को द्वि-द्वेष के भाव से मुक्त कर, अफुर कर लो। इसके पश्चात जगत का शोर आना बन्द हो जाए और उस मौन अवस्था में केवल आत्मिकज्ञान का प्रवाह ही बहे। इस तरह अपनी स्वाभाविक बनत ऐसी बनाओ कि आत्मिकज्ञान के प्रवाह की निर्मलता आपके हृदय व जीवन को हर कदम पर प्रकाशित करती रहे और विचारयुक्त रास्ता दर्शाती रहे। ऐसा होने पर आप किसी के भी छलावे में आकर जीवन के अविचारयुक्त मार्ग पर नहीं चढ़ पाओगे। जानो यह चारित्रिक व मानसिक सुरक्षा है। इस सुरक्षा के तहत् शारीरिक बल-वर्द्धन के साथ साथ, मानसिक बल-वर्द्धन करो। जानो मानसिक बल, शारीरिक बल से अधिक महत्त्व रखता है और उसकी ताकत के सामने बड़े से बड़ा पहलवान भी नहीं ठहर पाता। सजनों जब रावण जैसा पापी इसके सामने नहीं टिक पाया तो कलुकाल की तो हस्ती ही क्या है? याद रखो कलुकाल की अपनी कोई हस्ती है ही नहीं अपितु वह तो हमारी कमज़ोरी की निशानी है। हम अपनी कमज़ोरी से कलियुगी भाव-स्वभावों का निर्माण करते हैं। फिर वैसी ही हमारी सोच बनती हैं और वैसे ही कटु द्वेषपूर्ण बोल बनते हैं। जहाँ भी ऐसा होता है वहाँ समझ आ जाती है कि इस इन्सान को तृष्णा का रोग लग चुका है। अब जहाँ तृष्णा सताती है, वहाँ होश-हवाश तो रहता नहीं यानि वह इन्सान फिर बदहाल हो जाता है। ऐसे इन्सान को फिर चाहे कोई ठोकरें मारे या कुछ और करे, वह सम्भल नहीं पाता। जब सम्भल नहीं पाता तो उसके पास केवल झुखना रोना ही रह जाता है। आशय यह है कि उसका स्वाभाविक स्वरूप नकारात्मक बन जाता है और वह रोता झुखता इन्सान बीमार व्यक्ति की तरह हो जाता है। यह रोने झुखने की बीमारी जब उसकी बहुत बढ़ जाती है तो वह लाईलाज हो जाती है। ऐसा होने पर वह जीवन का मकसद सिद्ध करने से पहले ही यह अमोलक चोला छोड़ जाता है।

सजनों यह सब कहने का तात्पर्य है कि अपनी बुद्धि को टिकाणे लाने के लिए स्थिरता व पूरे दिल से इस द्वारे की रीति-नीति यानि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के वचनों को स्मृति में लो और उन्हें पूरा आदर-सम्मान दो। इस तरह उन वचनों के अमल द्वारा इन्सानियत में आकर निष्काम भाव से परोपकार प्रवृत्ति में ढल जाओ। जानो ऐसा करने से स्वतः ही समभाव आपकी नज़रों में हो जाएगा। फिर जब दो साल इस नीति पर मजबूत बने रह तद्नुरूप ही आचार-विचार दर्शाया तो समदृष्टि हो

जाओगे। जानो समदृष्टि ही दिव्य-दृष्टि प्राप्त कर त्रिकालदर्शी हो जाता है। ऐसा होने पर उससे कुछ भी छिपा नहीं रह पाता और इस तरह वह परिपूर्ण ब्रह्मज्ञानी बन जाता है। फिर उसकी मानसिकता यानि दिल दिमाग को कोई नहीं हर पाता। अन्य शब्दों में उसकी सुरत रूपी सीता का हरण कर, फिर कोई अपने साथ उसका नाता नहीं जोड़ पाता। आशय यह है कि ऐसी सुरत फिर हर हाल में शब्द के प्रति समर्पित रहती है और तेजस्वी हो जाती है। उसके तेज के सामने फिर कोई नहीं टिक पाता और न ही फिर ऐसी सुरत किसी प्रकार का त्याग दिखाने में सकुचाती है। ऐसा होने पर सच्चेपातशाहजी उसको 'आत्मा में जो है परमात्मा' उसका साक्षात्कार करने की युक्ति दे देते हैं। यहाँ आपको स्पष्ट कर दें कि यह युक्ति वही युक्ति होती है जो सजन श्री शहनशाह हनुमान जी ने अपनाई और उनको हर युग में उसका संग प्राप्त हुआ। कहने का आशय यह है कि इस युक्ति को प्रवान कर संकल्प कुसंगी संगी हो जाता है और ख़्याल स्वच्छ हो जाता है। इस महत्ता के दृष्टिगत ही आपको अपना ख़्याल सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की युक्ति अनुसार शब्द गुरु जो मूलमन्त्र आद् अक्षर है, उसके संग जोड़ने का निरन्तर आवाहन दिया जा रहा है ताकि आप सहजता से आत्म-दर्शन कर सको और आत्मिकज्ञान प्राप्त कर अपना जीवन सफल बना सको। जानो सजनों यह कोई लम्बी बात नहीं है। इस हेतु तो केवल अपने ख़्याल को पलटा खिलाने की हठधर्मी करने की बात है। अन्य शब्दों में जब भी लगे कि ख़्याल संसार की तरफ जा रहा है तो उसको यकदम मोड़ना है। फिर चाहे कुछ भी हो जाए उसे उस तरफ जाने नहीं देना। जानो ऐसा करने से न तो आपको संसारी धन की तरफ से कोई कमी होगी और न ही परमार्थी धन की तरफ से कमी लगेगी। इस तरह युक्ति प्रवान कर आपका ख़्याल अमीरों का अमीर हो जाएगा और अन्तर्मन में सन्तोष धैर्य का विकास होगा। जानो जब किसी भी इन्सान में ऐसी समर्थता का विकास हो जाता है तो उसके लिए सत्य-धर्म के निष्काम रास्ते पर बने रहना बहुत ही सहज हो जाता है। यहाँ तक कि फिर मौत का कोई सवाल भी नहीं रहता। मौत तो सजनों वैसे भी नहीं है। जानो उसका कोई वज़ूद ही नहीं है। इस का वज़ूद हमारी बौद्धिक कमजोरी के कारण ही है। अगर हम बौद्धिक रूप से स्वस्थ हैं यानि हमारा ख़्याल, हमारी सुरत परमधाम में स्थित है यानि प्रभु संग जुड़ी हुई है तो निश्चित रूप से यह मौत हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकती। इससे स्पष्ट होता है कि मौत का कारण भय व फुरना होता है। इसीलिए तो इस द्वारे की नीति है कि हर हाल में फुरनों से आज़ाद रहो। ऐसा होने पर मौत के फुरने से भी आज़ाद हो जाओगे। हम बता दें कि मौत कहीं नहीं है। मौत आ जाने पर भी कुछ नहीं मिटता क्योंकि पाँच तत्त्व तो पाँच तत्त्वों में विलीन हो जाते हैं और आत्मप्रकाश तो सदा ही परम-

प्रकाश में समरसता से मिला रहता है यानि न वह घटता है न बढ़ता है अपितु हर घड़ी सम बना रहता है। घटता-बढ़ता तो उसे नज़र आता है जिसकी दृष्टि कमजोर हो जाती है। इस कमजोरी को दूर करने के लिए सजनों विपरीत भाव-स्वभावों का त्याग करना तो बनता है। जैसा कि कहा भी गया हैः-

'' जैं कुर्बानी दिखायी, अटल राजधानी पाई ''

सो सजनों इस तरह आप प्रभु की बेअन्त लीला का बोध कर सकते हो। मानो कि उस लीलाधारी की बेअन्त लीला को समझने के लिए सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के वचनों की पालना करने के अतिरिक्त हमारे पास और कोई रास्ता नहीं है। अगर कोई इसके विपरीत चलन अपनाता है तो यह अपने आप को उलझाने की बात है। ब्रह्मज्ञानी ऐसा रास्ता कभी नहीं अपनाता। सजनों मानो कि गुरु-चेले का, सेवक-स्वामी का, भगत-भगवान का समय गया। अब तो समयानुकूल अपनी सोच को ढालने में ही भलाई है। इसीलिए कह रहे हैं कि नीति अनुकूल अपनी सोच, अपना व्यवहार व आचरण अपनाओ और इको रूप पहचान लो। जानो अब इसी इको रूप को पहचान कर एकरूपता में आने का समय आ गया है। इसका अनुभव तभी होगा जब मोक्ष की प्राप्ति होगी। अब आगे सुनोः-

चौपाईयां

ए दुनियां अजब तमाशा है। सजनों वेख के आंदा हासा है।।

हुन रघुवर जी दी तूं शरणी आ। ओ इको सब दा दाता है।।

मूर्ख रोंदा ही नज़र आंदा है। अभिमानी हस्से ते मखौल उड़ांदा है।।

इस जिन्दगी दा नहीं भरवासा है। ए दुनियां अजब तमाशा है।।

हुन पल विच शत्रु नज़र आंदा है। होश आई ते सजन बन बहंदा है।।

नाले ओ शोर मचांदा है। जिन्दगी घुले जिवें पताशा है।।

जिन्दगी घुले जिवें पताशा है। ए दुनियां अजब तमाशा है।।

मोह माया बिना ग़मग़ीन होया। ग़मग़ीन होया परेशान होया।।

भुलिया धन दियां मौजां माणदा है। गर्ज़ मार गरीब डरावंदा है।।

अधा अन्ना ते अधा सुजाखा ए। ए दुनियां अजब तमाशा है।।

उलटे रस्ते ते चढ़यों तूं। औझड़ां दे विच वड़ियों तूं।।

बलधारी जी दी तूं शरणी आ। ओ रस्ता देवन तेरा उलटा।।

रघुवर जी दे प्यारे दी आशा है। ए तमाशा नहीं हुन हासा है।।

हुन सब दी औषधि बलधारी जी हैं। जैं परखी सब दी नाड़ी है।।

जेहड़ा पीवे होंदी दूर बिमारी है। हृदय विच चरणां दा वासा है।।

हृदय विच चरणां दा वासा है, ए दुनियां अजब तमाशा है।।

जानो सजनों मानव के सर्वांगींण उत्थान यानि उसे अध्यात्म के रास्ते पर निर्विकारिता से आगे बढ़ने के योग्य बनाने हेतु इससे उत्तम ज्ञान कहीं से भी प्राप्त नहीं हो सकता। ऐसा इसलिए क्योंकि इस कीर्तन के माध्यम से सच्चेपातशाह जी ने निष्कर्ष निकाल दिया है कि वही एक सर्वशक्तिमान परमात्मा ही हर आत्मा में शोभित है यानि हर शरीर/वस्तु इस चराचर में उसी की दात है। इस सन्दर्भ में जो इन्सान इस यथार्थ से अपरिचित हो चुके हैं उनको इस कीर्तन के माध्यम से पुनः स्मृति में लाने का यत्न बड़े ही सुन्दर ढँग से किया गया है। इस कीर्तन में सजनों सच्चेपातशाह जी कहते है ''ए दुनियां अजब तमाशा है''। तमाशे को सिर्फ देखना होता है, तमाशा बनना नहीं होता। न ही तमाशे को अंगीकार करना होता है क्योंकि उसमें भी छल-कपट होता है। इसी छल-कपट के द्वारा तमाशा सबको अपनी ओर आकर्षित कर प्रभावित कर लेता है। यहाँ यह भी समझ लो कि प्रत्येक तमाशे के पीछे कोई न कोई कामना होती है और उसको सिद्ध करने हेतु यह नशे की भान्ति काम करता है। इस तमाशे के छल से बचाने के लिए ही सच्चेपातशाह जी कहते हैं कि तमाशे को ध्यानपूर्वक देख और समझ ले कि यह हक़ीकत नहीं अपितु भ्रम है। इसी भ्रम में तुझे उलझाकर कुछ प्राप्त करने का या अपने से जोड़ने का खेल बड़े ही रोचक ढँग से चल रहा है। सो सतर्क रह और इससे जुड़ मत क्योंकि सब एक है यानि दूसरा कोई नहीं है। सजनों हमने इस बात को समझना है और समता के भाव को अपनाकर प्रभु संग जुड़े रहना है। फिर सच्चेपातशाह जी कहते हैं कि इस तमाशे को देखकर हमें तो हासा आता है कि यह कैसी मूर्खता दिखा रहा है, हमें तो इस पर विश्वास ही नहीं होता। इस बात को

सजनों ध्यान से समझो। इस विषय में हम तो यही कहेंगे कि आज जो दुनियाँ का चारित्रिक स्वाभाविक रूप आपको निगाह आ रहा है, उस पर विश्वास मत करो अन्यथा अपना स्वाभाविक रूप भूल जाओगे, अपनी शक्ति, अपनी सर्व--व्यापकता भूल जाओगे। ऐसे में फिर सर्वकला सम्पूर्ण कैसे बन पाओगे? अब जानो कि यह खेल आरम्भ कहाँ से होता है? -

जानो कि चार युग होते हैं यथा सतयुग, त्रेता, द्वापर व कलियुग। सतयुग सत्य पर धर्म-संगत बने रहने का प्रतीक होता है। उस युग में रहने वाले सजन निष्कामी कहलाते हैं। अब जो निष्कामी होता है वह परोपकारी तो होता ही है। इसके विपरीत जहाँ कामना होती है वहाँ परोपकार कमाना कठिन हो जाता है क्योंकि लोभवश लगाव हो जाता है और वस्तु विशेष पाने की इच्छा बढ़ जाती है यानि सन्तुष्टि तब असन्तुष्टि में बदल जाती है और धीरता - अधीरता का प्रतीक बन जाती है जो कि अपने आप में अपनी यथार्थ शक्ति से कमजोर पड़ने की बात होती है। ऐसे में कोई भी हमें खरीदकर भ्रष्टाचारी बना सकता है। यही भ्रष्टाचार आज आपको जगह-जगह प्रतीत हो रहा है। सो इस भ्रष्टाचार को देखकर हमने भ्रष्टाचारी नहीं बनना। हमें तो इसके कारण को समझना है और इस तरह इससे ऊपर उठकर सदाचारी बनना है। अब आगे जानो कि सतयुग में केवल सत्य ही होता है। उस सत्य का आधार होता है - इन्सान का ज्ञानस्वरूप यानि सत्यज्ञान जो कि हर मानव को प्राप्त होता है। इसीलिए मानव सत्य का प्रतीक होता है। सत्य ही उनके हृदय में भासित होता है और वहाँ कोई उलझन नहीं होती। यही कारण है कि तब का इन्सान आत्मनिर्भर व आत्म विश्वासी होता है और ओजस्वी व तेजस्वी होता है। वह सब कुछ करने में समर्थ होता है। अब जब किसी भी कारण उनके मन में संकल्प पैदा हो जाता है तो ऐसा होते ही उनका सत्य से नाता छूट जाता है जिसका सीधा सा मतलब होता है कि असत्य अन्दर घुस गया और हमने उसे धार लिया। ऐसे में इन्सान सत्य-धर्म पर टिका नहीं रह पाता क्योंकि उसका हृदय मलिन हो जाता है। नतीजा अन्तर्घट में युग परिवर्तन यानि स्वाभाविक परिवर्तन हो जाता है। ऐसा होते ही जो धर्म सतयुग में चार पादों पर था वह त्रेता में तीन पादों पर स्थित हो जाता है यानि इन्सान गिर जाता है और असत्य-अधर्म का साम्राज्य स्थापित होता जाता है। यही कारण था कि सतयुग में जो वातावरण अत्यन्त निर्मल था व सुखद था, वह संकल्प में बढ़ती उत्तरोत्तर गिरावट के कारण मलिन होता जाता है। इस तरह सत्य का लोप होता जाता है और असत्य-अधर्म का साम्राज्य स्थापित

होता जाता है। आशय यह है कि इन्सान एक को भूलकर अनेक के पीछे दौड़ने लग जाते हैं। इसी से वड-छोट, जात-पात आदि का सवाल खड़ा हो जाता है। सारतः जान लो कि आज का जो यह सारा कलुषित वातावरण है, वह अत्यन्त ही भयानक है। ऐसा इसलिए क्योंकि आत्मिकज्ञान की वास्तविकता व महत्ता को कोई नहीं जानता। यहाँ जान लो कि आत्मज्ञान प्राप्त होने पर मन प्रसन्न व शान्त रहता है। जैसे ही उसको यह विचार रूपी खुराक मिलनी बन्द हो जाती है, तो मन - मनगढ़ंत ज्ञान में फँस जाता है। नतीजा वह हताश होकर धराशायी हो जाता है। जब मन धराशायी हो जाता है तो आपसे रुष्ट हो जाता है और फिर आपको नहीं छोड़ता यानि आपके ऊपर हावी हो जाता है। इसी तथ्य के दृष्टिगत सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ कह रहा हैः-

मन मजूर किस ने बनाया, किस ने इस नू रथ ते बिठाया।

किस ने इस नू राज दिवाया, किस ने इस नू राज दिवाया।

जैं मन बनाया ओ नादान मालका, तेरी जोति हिम कुल जहान मालका।।

रथ उत्ते तेरी जोत नज़र आई, जैंदी त्रिलोकी दे विच रौशनाई।

मन मिटया ते होया है आनन्द मालका, तेरी जोति हिम कुल जहान मालका।।

इस बात को समझते हुए सजनों जानो कि जब जीवन का संचालन मन के हाथ में हो जाता है तो बुद्धि विनाश को प्राप्त हो जाती है और हर समय मौत अंग-संग नजर आती है। इसी अज्ञान के कारण इन्सान को मौत का भय सताता है। चूंकि सजनों अब सतयुग आ रहा है इसलिए अब समय आ गया है सम्भलने का और सँवारने का। सम्भल कर, सवँर कर ही ख़्याल सतयुग में प्रवेश पा सकता है। इसके लिए हृदयगत वातावरण का निर्मल होना अति आवश्यक है। अब इस वातावरण में खुद को ढालो या न ढालो, यह आपकी अपनी इच्छा है। चाहो तो अपने हितैषी बनो, चाहे तो अपने वैरी बनो। यह आपका अपना व्यक्तिगत चयन है। पर हम बता दे कि अपने साथ वैर कमाना ठीक नहीं होता। इसीलिए अभी भी जीवन में जो समय बचा है उसमें यह कार्य सिद्ध कर लो अन्यथा तो कीर्तन में कहा ही गया हैः-

जिन्दगी घुले जिवें पताशा है। ए दुनियां अजब तमाशा है।।

अर्थात जीवनकाल का एक-एक क्षण गुजरता जा रहा है। कहीं ऐसा न हो कि आप अपना जीवन विफल कर बैठो यानि हार बैठो। अतः सम्भल जाओ और कहना मानकर परमात्मा की चरण-शरण में आ जाओ। इस हेतु नाम-अक्षर व युक्ति तो आपके पास है ही। उस युक्ति को प्रवान करो और सत्य के प्रतीक सजन पुरुष बन जीवन-विजयी हो जाओ। इसी सन्दर्भ में यह कीर्तन कान खोलकर सुनोः-

कर लै सांवले चरणां वल ध्यान ओए। आयों चौंह दिनां दा मेहमान ओए।।

आयों चौंह दिनां दा मेहमान ओए, इस घर चौंह दिनां दा मेहमान ओए।।

बिरती शब्द विच जमा लै। सुरति सांवले चरणां नाल ला लै।।

हुन ऐहो है साडा काम ओए। कर लै सांवले चरणां वल ध्यान ओए।।

पल्ले एहो बधना हुन दाम ओए। कर लै सांवले चरणां वल ध्यान ओए।।

सजनों स्वास स्वास नाम ध्या लौ। सच्चाई दा खर्च बना लौ।।

प्यारे रघुवर हिसाब तेरे कोलों लैसन। ओथे की देसें जवाब ओए।।

गाफ़ल ना हो तू नादान ओए। कर लै सांवले चरणां वल ध्यान ओए।।

बिन दागों तूं चोला पा लै। इस जग ते रोशनी बढ़ा लै।।

इसे विच है तेरी शान ओए। कर लै सांवले चरणां वल ध्यान ओए।।

बिन दागों चोला लिश्कारे पिया मारसी। महाबीर रघुवर जी दे लाड लडावसी।।

चित्त चरणां विच पावे विश्राम ओए। कर लै सांवले चरणां वल ध्यान ओए।।

सजनों इस कीर्तन के अन्तर्गत कहा गया है कि यह जीवन चार दिनों का मेला है। बाल, युवा, प्रौढ और वृद्ध यह हैं चार दिन। अब किसके पास अपनी अवस्था के मुताबिक कितना समय बचा है, वह विचार कर लो। सजनों याद रखो कि आप इस जगत में मेहमान हो, मालिक नहीं। इस जगत में कुछ भी आपका नहीं है। जितना भी आप छल-कपट, झूठ-चतुराईयों द्वारा व लोभ-मोहवश इकट्ठा करते जाओगे, उतने ही कामुक होते जाओगे। अन्त तो एक दिन सब कुछ जगत का जगत में ही छोड़कर चले जाओगे और अगले जन्म में उनमें से कुछ भी प्राप्त नहीं होगा। जानो यह कितनी बड़ी मूर्खतापूर्ण दौड है। इस

संसारी धन, महल-माड़ियों को इकट्ठा करने की दौड़ में इन्सान अन्त में हारकर थक जाता है और इस तरह सारा जीवन व्यतीत हो जाता है। हाथ क्या आता है? - जो कमाया था वह भी अन्त में चला जाता है या फिर जिनके लिए वह छोड़कर जाते हो, वे उसकी प्राप्ति हेतु लड़ते-झगड़ते हैं। सो इससे क्या होता है? - हम अपनों के लिए भी बाद में झंझट छोड़ जाते हैं। उनके अन्दर भी फिर पुरुषार्थ करने का मादा समाप्त हो जाता है क्योंकि उन्हें लगता है कि हमारे पास धन है इसलिए हमें अब और कमाने की आवश्यकता नहीं है। आप ही बताओ कि इससे बड़ी नासमझी और क्या हो सकती है? अतः याद रखो जीवन की जितनी आवश्यकताएँ हैं, बस वहीं तक आपकी सीमा है। अन्यथा तो जिन चार दिनों में हमने अपना जीवन बनाकर मोक्ष प्राप्त करना होता है, हम उसके प्रति समर्थता ग्रहण करने के स्थान पर जो नश्वर है उसी में रत होकर अपना जीवन बर्बाद कर बैठते हैं। ऐसा न हो इसीलिए उपरोक्त कीर्तन में कहा गया है कि हे मानव ! स्वास स्वास नाम ध्या कर सच्चाई का खर्च बना ले ताकि झूठ अन्दर घुस ही न पाए यानि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार रूपी शारीरिक स्वभाव उसमे उपज ही न पाएँ। कहने का आशय यह है कि शरीर के साथ शरीर होकर मत जीओ अपितु शरीर से स्वतन्त्र होकर जो आपका अपना यथार्थ स्वरूप है, उस स्वरूप की गुणवत्ता व शक्ति अनुसार अपना जीवन निर्भयता से व्यतीत करो। अब इस कीर्तन में सच्चाई की बात की गई है, उससे तात्पर्य यह है कि तूँ आत्मा है, शरीर नहीं। आत्मा है तो आत्मिकज्ञान प्राप्त कर। आत्मज्ञान प्राप्त करने पर ही आत्म-स्वरूप होकर इस जगत में आप आत्मीयता से विचर पाओगे और आपका ख़्याल शरीर के साथ नहीं जुड़ेगा व न ही शारीरिक स्वभाव अपनाएगा। इस तरह आत्मज्ञान प्राप्तकर आपकी सुरत आत्म-भाव से इस जगत में विचरती हुई भौतिक संसार पर विजय प्राप्त कर लेगी। आप भी सजनों अमरता के भाव से जीवन जिओ यानि नश्वरता को गले मत लगाओ क्योंकि यह बुद्धिहीनता की निशानी है। अब जानो कि सच्चाई को धारण करने के लिए हमें क्या करना होगा? - इसके लिए हमे अपनी वृत्ति शब्द में जमानी होगी और सुरत चरणों में लगानी होगी। अन्य शब्दों में अपनी वृत्ति यानि मन-चित्त का झुकाव उस मूलमन्त्र आद् अक्षर की तरफ जोड़ना होगा। ऐसा करने से सुरत यानि आपका ख़्याल स्वतः ही उस शब्द के आचरण, ज्ञान, गुण व शक्ति को धारणकर अत्मसात करने में जुट जाएगा। जानो यही हमारे जीवन का मकसद है। इस मकसद को सिद्ध करने हेतु अपनी वृत्ति को जगत संग मत जोड़ो क्योंकि आपके पास शब्द है और ख़्याल भी है। अपनी वृत्ति व ख़्याल को यदि सही जगह जोड़ोगे तो सब कुछ प्राप्त कर लोगे। फिर कहीं से कुछ प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं रहेगी। तब ऐसा लगेगा कि सब कुछ अपने पास है और

आप उनका सदुपयोग नीति-नियम अनुसार करते हुए मनोवांछित फल प्राप्त कर लोगे। इस तरह फिर जीव, जगत और ब्रह्म के यथार्थ को जान यथार्थवादी बनना कोई कठिन बात नहीं रहेगी। फिर आत्मिकज्ञान प्राप्तकर आप जीव, जगत और ब्रह्म इन तीनों के सत्य से परिचित हो जाओगे। ऐसा होने पर सहज ही एकरूपता का दर्शन होगा और सजनता का वातावरण बनेगा। फिर समभाव का कोई सवाल नहीं रहेगा क्योंकि द्वि-द्वेष, निन्दा-उस्तत, लड़ाई-झगड़े वाला द्वैत भाव समाप्त हो जाएगा। तब मन-वचन-कर्म से आप के द्वारा कोई पाप नहीं होगा और आप सतवादी बन निष्कामी हो जाओगे। जानो निष्कामी को किये कर्मों का लेप नहीं लगता इसीलिए उन्हें उसका फल नहीं भुगतना पड़ता। नतीजा चित्त शुद्ध बना रहता है और मुक्ति प्राप्त जाती है।

सजनों यह है अपने सच्चे घर पहुँच विश्राम को पाना। याद रखो फल होगा तो उसका बीज होगा। बीज होगा तो आगे उसका विस्तार होगा। पर यदि फल ही न हुआ तो कर्मबन्धन से मुक्त हो जाओगे। कहने का तात्पर्य यह है कि नादानी मत करो अपितु इन्सान हो तो इन्सानी दिखाओ। इस बात को सजनों खुद समझो और सबको समझाने के योग्य बनो। घरों में छुपकर मत बैठो। क्योंकि आप सबके हो और सब आपके हैं - इसी भाव से जीवन में आगे बढ़ो। इस सन्दर्भ में यदि कोई चारित्रिक रूप से गिर रहा है तो उसे देखते मत रहो अपितु खुद सम्भलो, अपने बच्चों को व कुल समाज को सम्भालो। यहाँ याद रखो कि मानव की सुन्दरता का प्रतीक उसका शरीर नहीं अपितु उसके विचार होते हैं। उन्हीं विचारों से उसकी सच्चरित्रता का परिचय मिलता है। आप भी सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के विचारों को आत्मसात कर ऐसे सदाचारी बनो। इस हेतु आत्मज्ञान प्राप्त करो। आत्मज्ञान प्राप्त कर लिया तो फिर कुछ और प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं रहेगी। इस बात को समझो और सबको आगे बताओ। इस तरह अपने व सबके सजन बन जाओ और परोपकार कमाओ। इस परोपकार के कार्य में योगदान देने हेतु बेकार के कामों से अपने ख़्याल को हटाकर इस तरफ लगाओ और अपने इस समय का सही इस्तेमाल कल्याणकारी कार्यों में करो। अब हिम्मत दिखाना और अपनी अक्ल टिकाणे ले आना।

आप ऐसा करने में कामयाब हों, इन्हीं शुभकामनाओं सहित।